नेहरू नहीं, पटेल थे अनुच्छेद 370 के जनक

- श्रीनाथ राघवन

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने 31 अक्तूबर को सरदार वल्लभभाई पटेल की जयंती पर आयोजित एक समारोह में अनुच्छेद 370 को रद्द करने के निर्णय को उन्हें समर्पित किया। मोदी ने कहा कि सरदार पटेल अनुच्छेद 370 के विरोधी थे। भाजपा-संघ का जोर इस बात पर रहा है कि अनुच्छेद 370 लागू करने का फैसला देश के पहले प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू का था जबकि उनकी सरकार में गृह मंत्री सरदार पटेल इसके विरोधी थे। सच्चाई इसके किस तरह बिल्कुल उलट है, इसे जानना जरूरी है।

अनुच्छेद 370 के ऐतिहासिक परिदृश्य से बात आरंभ करें। शायद इससे शुरुआत करना सबसे अच्छा है कि ब्रिटिश भारत- या जिसे ब्रिटिश राज कहते हैं- दो भिन्न प्रकार की शासन व्यवस्था से बना था। पहला तो सीधे शासित प्रदेश थे और दूसरा, परोक्ष रूप से शासित- या जिन्हें रजवाड़े (प्रिंस्ली स्टेट) कहा जाता था। ये रजवाड़े संख्या में 500 से अधिक थे और वस्तुतः पूरे 1946 और जून, 1947 तक जब विभाजन की योजना की घोषणा की गई, इन रजवाड़ों पर वस्तुतः बहुत ध्यान नहीं दिया गया क्योंकि सभी लोगों का ध्यान मुख्य प्रदेशों और भारत का क्या होगा, पर था- कि क्या विभाजन होने जा रहा है- और अगर ऐसा है, तो किन शर्तों पर।

जब विभाजन की योजना घोषित कर दी गई, रजवाड़ों का मुद्दा सामने आया। समय का बहुत दबाव था क्योंकि इस मुद्दे को 15 अगस्त, 1947 से पहले हल कर लिया जाना था। (तब तक जून का महीना आ चुका था।) इस वक्त तक साफ हो चुका था कि भोपाल, त्रावणकोर, हैदराबाद और कश्मीर-जैसे कुछ बड़े रजवाड़े किसी तरह की स्वतंत्रता की तलाश कर रहे थे.. और यही वजह थी कि भारत सरकार को वस्तुतः इनसे निबटना था। जो व्यक्ति इस समस्या के आसान और सीधे समाधान के लिए आगे आए, उनका नाम था वीपी मेनन जो गृह मंत्री सरदार वल्लभभाई पटेल के साथ काम कर रहे थे।

मेनन ने मूलतः कहा कि भारत सरकार के कानून, 1935 के प्रावधानों के आधार पर हम सिर्फ इन तीन विषयों पर सभी प्रदेशों को भारतीय गणतंत्र में शामिल होने को कहें- विदेश मामले, रक्षा और संचार; साथ में यह प्रावधान करें कि अन्य सभी विषयों पर वे संबंधित प्रदेश अपने क्षेत्राधिकार का उपयोग करना जारी रखें और उन्हें यह अधिकार होगा कि वे आगे बढ़ने के लिए क्या करना चाहते हैं। इसी आधार पर अधिकांश प्रदेशों को 15 अगस्त, 1947 से पहले शामिल किया गया।

तीन इलाकों की राय इनसे अलग :

आजादी के दिन तीन प्रमुख इलाके ऐसे थे जो शामिल होने के इस तरीके से अलग राय के थे। ये थेः जूनागढ़, हैदराबाद और कश्मीर। कश्मीर मुद्दा कोई अलग-थलग अद्वितीय मुद्दा नहीं है; यह, दरअसल, मुद्दों के खास समूह का हिस्सा है। जूनागढ़ और हैदराबाद में मुस्लिम शासक थे लेकिन हिंदू बहुल आबादी थी जबकि कश्मीर के साथ उलटा था- शासक हिंदू थे और इसकी आबादी में मुसलमान बहुमत में थे। इन सभी तीन प्रदेशों ने भारत में शामिल होना स्वीकार नहीं किया था- जूनागढ़ के मामले में तो, दरअसल, नवाब पाकिस्तान में शामिल होना चाहते थे। 15 अगस्त, 1947 को जब भारत आजाद हो रहा था, जूनागढ़ के नवाब ने घोषणा की कि उन्होंने पाकिस्तान में शामिल होने का प्रस्ताव किया है। और ध्यान रखें, जूनागढ़ आज भारत का हिस्सा है जहां से सरदार पटेल आते हैं और इसी तरह महात्मा गांधी भी। इसलिए, जूनागढ़ के सवाल पर काफी व्याकुलता थी।

यह जानना रोचक है कि यह वस्तुतुतः जूनागढ़ का संदर्भ है कि पाकिस्तान को कहा गया कि जहां शासक की धार्मिक पहचान और उसकी आबादी के बहुमत की पहचान में अंतर है, वहां के मामलों में बहुमत की इच्छा

जानने के लिए भारत सरकार किसी भी तरह की परीक्षा के लिए तैयार है। भारत सरकार को पूरा भरोसा था कि जूनागढ़ में कराया गया कोई भी जनमत-संग्रह उसके पक्ष में जाएगा। यह भी ध्यान रखने योग्य बात है कि जनमत-संग्रह का मसला कोई हवा में नहीं आया था। वस्तुतुतः विभाजन के समय दो हिस्सों में जनमत-संग्रह हो चुका था। इनमें से एक था उत्तर-पश्चिमी सीमांत प्रदेश (एनडब्ल्यूएफपी) जो अब पाकिस्तान का हिस्सा है। इसका नेतृत्व सीमांत गांधी खान अब्दुल गफ्फार खान के भाई खान साहब कर रहे थे। यहां 1946 में कांग्रेस सरकार थी। यहां जनमत-संग्रह इसीलिए कराया गया। असम में भी एक मुस्लिम बहुल जिला- सिलहट, था। प्रदेश के शेष हिस्सों के संदर्भ में इसकी आबादी असंगत थी। सिलहट पूर्वी पाकिस्तान में चला गया और अब बांग्लादेश का हिस्सा है।

कश्मीर में जनमत-संग्रह का सवाल तब आया जब अक्टूबर, 1947 में पाकिस्तान ने आदिवासी घुसपैठिये भेजे और महाराजा भारत से मदद मांगने को विवश हो गए और बदले में उन्होंने भारत में शामिल होना स्वीकार किया। यह करते समय भारत सरकार ने जम्मू-कश्मीर की जनता की इच्छा जानने के लिए जनमत-संग्रह कराने की अपनी प्रतिबद्धता दोहराई। दरअसल, तब भारत के गवर्नर जनरल माउंटबेटन ने पाकिस्तान सरकार से औपचारिक प्रस्ताव किया था कि इन सभी तीन मामलों में जनमत-संग्रह कराया जाए। और तब, उस वक्त पाकिस्तान के गवर्नर जनरल मोहम्मद अली जिन्ना ने वस्तुतः इसे ठुकरा दिया था। उन्होंने कहा कि किसी तरह के जनमत-संग्रह की जरूरत नहीं हैः हम कश्मीर और जूनागढ़ की अदला-बदली कर लें। आप जूनागढ़ रखो, हम कश्मीर ले लेंगे।

यह भी रोचक है कि उस दौरान हुई बैठकों में सरदार वल्लभभाई पटेल ने पाकिस्तान से कहा- और मैं उपलब्ध ऐतिहासिक दस्तावेज से उद्धृत कर रहा हूं- हम कश्मीर के लिए जूनागढ़ की बात क्यों कर रहे हैं? हम हैदाराबाद के लिए कश्मीर की अदला-बदली करें। इन दावों के विपरीत कि अगर सिर्फ सरदार पटेल कश्मीर मुद्दे को देख रहे होते, पूरा कश्मीर भारत का हिस्सा होता, एक समय वह हैदराबाद के लिए कश्मीर देने को तैयार थे। और यह ठीक भी था क्योंकि जैसा कि आप सब जानते हैं, हैदराबाद भारत के बीच में है। और उनके लिए कश्मीर नहीं, इससे निबटना सबसे महत्वपूर्ण मुद्दा था।

11 नवंबर, 1947 को भारतीय सेना जब जूनागढ़ में घुसी, वल्लभभाई पटेल ने भाषण दिया- और यह उनके संग्रहित भाषणों में उपलब्ध है- हमने पाकिस्तानियों से कहा, अगर आप हमें हैदराबाद दे सकते हों, तो हम तुम्हें कश्मीर देने को इच्छुक हैं। इसलिए इससे उन गलत धारणाओं को पूर्ण विराम मिल जाना चाहिए कि अगर सरदार पटेल कश्मीर के प्रभारी होते, तो कश्मीर समस्या कभी पैदा नहीं होती।

कौन ले गए संयुक्त राष्ट्र में :

इन दिनों कहा जा रहा है कि दिसंबर, 1947 में कश्मीर मुद्दे को संयुक्त राष्ट्र में ले जाने के निर्णय के लिए सिर्फ जवाहरलाल नेहरू उत्तरदायी थे। ऐतिहासिक दस्तावेजों से हम जानते हैं कि दरअसल, खुद नेहरू इस मुद्दे को संयुक्त राष्ट्र में ले जाने के विरोधी थे। इस विचार के सबसे बड़े तरफदार लॉर्ड माउंटबेटन थे। उसका संदर्भ राजनीतिक की जगह रणनीतिक था। भारतीय सेना को अक्टूबर, 1947 में कश्मीर विमान से ले जाया गया। लेकिन यह सड़क मार्ग से बहुत कम पहुंच पाई और या कश्मीर में संचार की सुविधा भी उस समय काफी कम थी। इसलिए सेना तुरंत मोर्चा संभालने में सक्षम नहीं थी। वे काबायलियों को पीछे नहीं ढकेल पा रहे थे, उन क्षेत्रों को वापस पाने की तो बात ही छोड़ दें जिसे हम आज पाक के कब्जे वाला कश्मीर कहते हैं या उत्तरी क्षेत्र- गिलगित-बलूचिस्तान।

भारतीय सेना ने एक प्रस्ताव किया। जनरलों ने कहा कि समस्या से निबटने का सबसे अच्छा सैन्य तरीका उन ठिकानों पर हमला करना है जहां से ये घुसपैठिये काम कर रहे हैं। और इसका मतलब कि हमें पंजाब के पाकिस्तानी हिस्से से पर आक्रमण करना होगा। इसका मतलब, पाकिस्तान के खिलाफ युद्ध की घोषणा करनी होगी। सबसे महत्वपूर्ण बात यह कि इसका मतलब पंजाब में सैन्य अभियान चलाना होता जो विभाजन की अभूतपूर्व हिंसा से तब भी जूझ रहा था। करीब दस लाख लोग मारे गए थे। लाखों लोग अपने घरों से बेदखल कर दिए गए थे।

इस संदर्भ में भारत सरकार ने सही सोचा कि अगर हमने पाकिस्तान पर हमला किया, तो वह हिंदुओं, मुसलमानों और सिखों के बीच बड़ी हिंसा का एक और दौर होगा और यह कुछ ऐसा था जो हम नहीं चाहते थे। इसी संदर्भ में भारत सरकार ने, दरअसल, निर्णय किया कि मसले को संयुक्त राष्ट्र में ले जाना कम बड़ी बुराई है और वहां पाकिस्तान से पीछे लौटने को कहा जाए। निश्चित तौर पर, घटनाएं इस तरह नहीं हुईं लेकिन यह यकीन करने की वजह है कि ये फैसले थोड़े अलग होते, अगर नेहरू प्रधानमंत्री नहीं होते।नेहरू की सरकार में डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी भी मंत्री थे। मुखर्जी बाद में जनसंघ के संस्थापक बने। यही बाद में भाजपा बनी। और जनसंघ की मांगों में पहली थी कश्मीर के विशेष दर्जे को वापस करना। इसलिए 1952 में जब इन मुद्दों पर विचार किया जा रहा था, तो संसदीय बहस के दौरान मुखर्जी से पूछा गया- और इस बारे में सामग्री ऑनलाइन उपलब्ध है- आप सभी कश्मीर के बारे में ये सभी चीजें आज कह रहे हैं लेकिन क्या मसले को संयुक्त राष्ट्र में ले जाने के लिए आप भी पार्टी नहीं हैं? मुखर्जी ने कहाः मंत्रिमंडल ने एक फैसला किया। यह सामूहिक फैसला था; हमने इसे लिया जिससे पीछे हटने का मेरे पास कोई कारण नहीं है। यह दिखाता है कि मुखर्जी में ऐतिहासिक तथ्यों के प्रति कुछ ईमानदारी थी जबकि आज वाट्सएप यूनिवर्सिटी से ज्ञान लेने वालों में ऐसा कुछ नहीं है।

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने 31 अक्तूबर को सरदार वल्लभभाई पटेल की जयंती पर आयोजित एक समारोह में अनुच्छेद 370 को रद्द करने के निर्णय को उन्हें समर्पित किया। मोदी ने कहा कि सरदार पटेल अनुच्छेद 370 के विरोधी थे। भाजपा-संघ का जोर इस बात पर रहा है कि अनुच्छेद 370 लागू करने का फैसला देश के पहले प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू का था जबकि उनकी सरकार में गृह मंत्री सरदार पटेल इसके विरोधी थे। सच्चाई इसके किस तरह बिल्कुल उलट है, इसे जानना जरूरी है। (साभार नवजीवन। प्रस्तुतिः मनुज फीचर सर्विस)

नोटः मनुज फीचर सर्विस में छपे लेखों के विचार लेखक के अपने हैं। माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय का इनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। यहां प्रकाशित सामग्री का उपयोग गैर व्यावसायिक कार्यों के लिए करने हेतु किसी अनुमति की आवश्यकता नहीं है। मनुज फीचर सर्विस का उल्लेख अवश्य करें।